महाभारत एवं रामचरित मानस में 'नारी–शिक्षा का स्वरूप'

डॉ0 राजेश कुमार सिंह

प्राचीन काल में लगभग ई0पू0 300 तक नारी का समाज में महत्वपूर्ण स्थान था। पुत्र और पुत्रियों को समान रूप में शिक्षा देना, माता–पिता का कर्तव्य माना जाता था। लड़कियाँ प्रायः सोलह वर्ष की अवस्था तक अविवाहित रह सकती थी। बालक के समान बालिका के लिए भी उपनयन आवश्यक माना जाता था, फलतः उपनयन के पश्चात् सोलह वर्ष की अवस्था तक उसे शिक्षा दी जाती थी, जिससे उसे योग्य वर मिल सके। अथर्ववेद[1] के अनुसार नारी विवाह के उपरांत तब ही सफल हो सकती है, जबकि उसे ब्रह्मचर्य अवस्था में भलीभाँति शिक्षित किया गया हो। यह शिक्षा विशेषकर वैदिक साहित्य होती थी, जिससे वह हवन–यज्ञों में अपने पति के साथ भाग ले सके। ऋग्वेद[2] में अनेक मंत्रों की रचना महिलाओं ने की। अनुश्रुतियों के अनुसार भी ऋग्वेद में 20 कवियित्रियों की रचनाएँ है, उनमें से कुछ के नाम है, विश्वधारा, सिकता, निवावरी, घोषा, रोमशा, लोपामुद्रा, अपाला तथा उर्वशी।[3] यज्ञ में पति–पत्नी दोनों को ही समान रूप से सक्रिय रहना पड़ता था।